https://artorbit.in/
Art Orbit - Volume 01, No 03, SEP 2025 PP 73-78 (Total PP 06)
ISSN : 3107- 670X (Online)
Frequency – Monthly

CONTRIBUTION OF APARNA KAUR AND ANUPAM SOOD TO CONTEMPORARY ART: A COMPARATIVE VIEW (**समकालीन कला में अपर्णा कौर और अनुपम सूद का अवदान : एक तुलनात्मक दृष्टि**)

Prabhulal Gameti[a]*

[a] *Research Scholar, MLSU University, Udaipur*

[a]*Email: prabhulalmay97@gmail.com*

Abstract

This article presents a comparative study of Aparna Kaur's and Anupam Sood's contributions to contemporary Indian art. Both artists have centered their art on female identity, society, and human sensibilities. Aparna Kaur (born 1954, Delhi) is a self-taught artist. Her works reflect a literary background, social concerns, and human suffering. She has depicted subjects such as the Partition, the 1984 riots, the plight of widows, women's issues, and the environment. Her painting style is simple, characterized by symbolism and deep emotional understanding. Anupam Sood (born 1944, Hoshiarpur), on the other hand, is a trained artist who primarily works in printmaking (intaglio, lithography, screen printing). Her themes are introspective and female-centric. She has based her paintings on human inner tendencies, social relationships, and environmental concerns. Her compositions demonstrate technical maturity and discipline. There are also several similarities between the two artists—both have presented societal anomalies, the status of women, and environmental crises with profound sensitivity. The difference lies in Aparna's narrative, which is more symbolic and literary in its influence, while Anupam's approach is more introspective and technically mature. In conclusion, Aparna Kaur and Anupam Sood have enriched contemporary Indian art from a female perspective. Their art reflects concerns ranging from local to global, and they have advocated for women's empowerment, social justice, and human values.

इस लेख में समकालीन भारतीय कला में अपर्णा कौर और अनुपम सूद के योगदान का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। दोनों कलाकारों ने स्त्री-अस्मिता, समाज और मानवीय संवेदनाओं को अपनी कला का केंद्र बनाया है। अपर्णा कौर (जन्म 1954, दिल्ली) आत्मदीक्षित कलाकार हैं। उनके कार्यों में साहित्यिक पृष्ठभूमि, सामाजिक सरोकार और मानवीय पीड़ा की झलक मिलती है। उन्होंने विभाजन, 1984 के दंगे, विधवाओं की स्थिति, महिलाओं की समस्याएँ, और पर्यावरण जैसे विषयों को चित्रित किया। उनके चित्रों की शैली सादगीपूर्ण है, जिसमें प्रतीकात्मकता और गहन भावबोध मिलता है। साथ ही अनुपम सूद (जन्म 1944, होशियारपुर) प्रशिक्षित कलाकार हैं और मुख्य रूप से प्रिंटमेकिंग (इंटाग्लियो, लिथोग्राफी, स्क्रीन प्रिंटिंग) में कार्य करती रही हैं। उनके विषय आत्मनिरीक्षणात्मक और स्त्री-केंद्रित हैं। उन्होंने मनुष्य की आंतरिक प्रवृत्तियों, सामाजिक रिश्तों और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को अपने चित्रों का आधार बनाया। उनकी रचनाओं में तकनीकी परिपक्वता और अनुशासन दिखाई देता है। दोनों कलाकारों में कई समानताएँ भी हैं—दोनों ने समाज की विसंगतियों, स्त्री की स्थिति और पर्यावरणीय संकट को गहन संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। अंतर यह है कि अपर्णा का कथ्य अधिक प्रतीकात्मक और साहित्यिक प्रभाव वाला है, जबकि अनुपम का दृष्टिकोण अधिक आत्मविश्लेषणात्मक और तकनीकी रूप से परिपक्व है। निष्कर्षतः अपर्णा कौर और अनुपम सूद ने समकालीन भारतीय कला को स्त्री-दृष्टि से समृद्ध किया है। दोनों की कला में स्थानीय से लेकर वैश्विक सरोकार झलकते हैं और उन्होंने स्त्री-सशक्तीकरण, सामाजिक न्याय और मानवीय मूल्यों की पक्षधरता की है।

Keywords: Contemporary Art, Women's Empowerment, Emotional, Human Values, Sensitivity, Inner Tendencies, Spirituality, Human Figures, Expression, Environment.

समकालीन कला, स्त्री-सशक्तिकरण, भावनात्मक, मानवीय मूल्य, संवेदनशीलता, आंतरिक प्रवृत्तिया, आध्यात्मिकता, मानवाकृतियों, अभिव्यक्ति, पर्यावरण |

---

* Corresponding author.

परिचय

आदिवासी कला का इतिहास मानव सभ्यता के प्रारंभिक चरणों से जुड़ा हुआ है। जब मनुष्य गुफाओं में रहता था और शिकार करके जीवन यापन करता था, तब उसने अपनी अनुभूतियों को दीवारों पर चित्रों के रूप में व्यक्त किया। भीमबेटका, अजंता, एलोरा और बदामी की गुफाओं के चित्र इस कला के जीवंत प्रमाण हैं। ये चित्र केवल कला नहीं, बल्कि सामाजिक और धार्मिक जीवन की अभिव्यक्ति हैं।

उद्देश्य

- आदिवासी कला के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन।
- जनजातीय समाज के भाषा, नृत्य, गीत, और शिल्प परंपराओं की पहचान।
- आधुनिक युग में आदिवासी संस्कृति के संरक्षण और पुनर्जागरण की आवश्यकता का मूल्यांकन।

कार्यविधि

यह अध्ययन **वर्णनात्मक (Descriptive)** और **विश्लेषणात्मक (Analytical)** दोनों पद्धतियों पर आधारित है।

- **प्राथमिक स्रोत**: जनजातीय उत्सवों, नृत्यों, चित्रकला, और हस्तशिल्प मेलों का प्रत्यक्ष अवलोकन।
- **द्वितीयक स्रोत**: शोध ग्रंथ, सरकारी रिपोर्टें, सांस्कृतिक संस्थाओं की वेबसाइटें (CCRT, Holidify आदि)।

विवेचन

आदिवासी कला को जानने से पहले आदिवासी कला या जनजातीय कला का उदय कहाँ, कैसे और कब हुआ? प्रागैतिहासिक काल में जब मानव अपने जीवन की भावनाएँ और संघर्ष प्रस्तुत करते थे। वे गुफा में रहकर शिकार कर अपना जीवन व्यतीत करते थे। मनुष्य जब पृथ्वी पर आया, कहाँ से आया, यह जन्म कब हुआ, यह आदिमानव काल से वर्तमान काल तक उन्नति कैसे और क्यों हुई, क्योंकि पृथ्वी का जन्म करोड़ों वर्षों पूर्व हुआ। इन सभी प्रश्नों के उत्तर आज भी विवाद से घिरे हुए हैं, किंतु वैज्ञानिक खोजों से पृथ्वी का जन्म करोड़ों वर्षों पूर्व सूर्य से हुआ, जो धीरे-धीरे कीड़े-मकोड़े, मछलियाँ, जानवर के कालचक्र से उसने वनमानुष, आदिमानव की आकृति से गुजरते वक्त के साथ आज मानव का रूप धारण कर लिया। आदिवासियों का जन्म कैसे हुआ यह एक कठिन और बहुमुखी विषय है। जब सिंधु घाटी की सभ्यता के पतन से यह विकसित हुए और शिकारी समुदाय अलग-अलग क्षेत्र में अपना विकास प्रारंभ करना शुरू करें। शिकार कर यह अपना भोजन बनाते, वहीं यह खेती, पशुपालन, मछली और औजार बनाने का काम भी किया करते हैं। पूरे भारत के अलग-अलग हिस्सों में आदिकाल से कला का विकास होना शुरू हो गया।

1879 में अल्तमिरा की गुफा से लेकर विश्व की प्रसिद्ध गुफाएँ भीमबेटका, अजंता, एलोरा, बादामी, लास्को, पश्चिमी अमेरिका, पूर्व स्पेन जैसे बहुत सी विख्यात गुफाओं में कला का अस्तित्व आदिकाल से ही पाया गया। प्राचीन काल के समय से आदिवासी कला विद्यमान रही पर यह विभिन्न प्रकार के ज्यामितिक आकार, रेखाओं के मध्य गुफा की दीवारों, छतों, मुख्य दरवाजे पर मौजूद रही। आदिकाल के मानव द्वारा निर्मित की गई यह कला समकालीन समय में आदिवासियों के जीवन में आज भी मौजूद है। उस समय लोग जादू-टोना, तंत्र-मंत्र, शिकार, उत्सव, युद्ध, विवाह के चित्र बनाकर अपने देवी-देवताओं को भी रेखांकित कर पूजा-पाठ के माध्यम से अपनी बात को सामूहिक तौर पर प्रकट करते थे। ठीक उसी प्रकार आज से पहले आदिवासी के जीवन में जो परंपरा शुरू हुई, वह आज भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही है। वह आज भी टोना-टोटका, शत्रु को परास्त करने के लिए, लंबे समय से बीमार चल रहे रोगियों के लिए और विभिन्न प्रकार के तंत्र-मंत्र, देवता, वीर, पिशाच या उनसे संबंधित नृत्य और त्योहार, युद्ध के अस्त्र-शस्त्र के चित्र बनाते। ऐसे ही शायद कुछ कला तत्व होंगे जो जनजाति कला या आदिम कला किसी विशेष शैली को विकसित कर अपनी एक अलग कला का निर्माण करते थे।

प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक समय में हर जगह या हर प्रदेश में जनजातियों को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न प्रकार के उत्सव समय पर आयोजित किए जाते हैं। हाल ही में उत्तर प्रदेश में जनजातीय गौरव दिवस मनाया गया। अंतर्राष्ट्रीय भागीदारी उत्सव में लोकनायक बिरसा मुंडा की जयंती के अवसर पर आयोजित किए गए आयोजन जो जनजाति के विकास में सहयोग देने में कारगर साबित हुए। उत्तर प्रदेश में 12 जनजातियाँ हैं जिसमें थारू सबसे पुरानी है। उत्तराखंड के कुमाऊं और गढ़वाल मंडलों में राजी, भोटिया, जौनसारी, जाट, गढ़वाल, थारू, भ इत्यादि बहुत सी जनजातियाँ हैं जो उत्तर प्रदेश में निवास करती हैं। इसमें थारू और बोक्सा तराई क्षेत्र में निवास करती हैं और शेष जनजातियाँ पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करती हैं। समय के बदलते परिवेश में जनजातियों में नित्य नए परिवर्तन होना शुरू हो रहे हैं। अब इनके रहन-सहन, खान-पान, विवाह, गीत, नृत्य, सामाजिक तौर पर परिवर्तन आता जा रहा है। कुछ जनजातियों में आज भी परंपराएँ जीवित हैं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ती भी रहेंगी। इन्हीं कुछ विशेषताओं को अपने लेख में संक्षेप में प्रस्तुत किया है।

भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रों में तरह-तरह के धर्म, समुदाय, जनजातीय संस्कृति के लोग बसे हैं। जिनको अलग-अलग भाषाएँ अपने क्षेत्र अपने समुदायों के द्वारा विकसित होती हैं। अपनी सरल साधारण बोलचाल की भाषा होती है। इसी तरह भारत के संविधान में भारतीय भाषाओं में अष्टम अनुसूची में दो सूची में दो बोडो और संताली (संथाली) भाषाओं को संवैधानिक रूप प्राप्त हो चुका है। भाषाएँ और व्यक्ति, जाति, समुदाय, क्षेत्र और जनजातियों की पहचान होती हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की तरफ बढ़ती जाती हैं जिसमें समय के साथ-साथ कई छोटे बड़े बदलाव आते हैं। अपनी भाषाओं के साहित्य सभा की स्थापना 1952 में बोडो, 1966 में कर्बी, 1972 में मिसिंग, 1981 में लिव जनजातीय भाषाओं के लोगों में अपनी भाषा को प्रत्यक्ष प्रमाण को संविधान को अपने प्रयासों द्वारा सृजन तेजी से बढ़ रहा है।

भारत में किसी भी जाति अथवा जनजाति की संस्कृति, उनके विचार, उनके रीति-रिवाज, धर्म, कला, साहित्य, सामाजिक विकास और आकांक्षाओं की सही जानकारी तभी प्राप्त की जा सकती है जब उस जगह के लोगों के बीच रहकर उनके लोक जीवन शैली को अच्छी तरह उसका अध्ययन कर लिया जाए। जनजाति अपनी प्राचीन प्रथाओं से जो कई वर्षों से चली आ रही है, वे आज भी अपनी शैली के अंतर्गत गीत गाते हैं और पुरानी कथाओं से प्रेरित होकर नाटक मंच करते हुए अपनी जनजातियों का अस्तित्व कला के रूप में आज भी बनाए हुए हैं। हर जनजाति का अपना एक मुख्य गीत और नृत्य होता है जो किसी खास त्योहार पर, युद्ध के जीतने पर या खेती करने के लिए या शादी-विवाह में अपने समूह में गाते हैं और वादन के साथ नृत्य करते हैं जिसमें युवक, युवतियों और शादीशुदा स्त्री-पुरुष भी भाग लेते हैं और गाँव में सामूहिक तौर पर इसका आयोजन भी करते हैं। सभी जनजातियाँ आपस में मिलकर अपने समूह में एक दिन और एक समय का निर्धारण करके अपनी वर्षा ऋतु का स्वागत करती हैं। जैसा कि हम सब जानते हैं कि असम के बिहू गीत और नृत्य बहुत प्रसिद्ध है जो वैशाख के समय में किया जाता है और बसंत काल में बाघरूमबा नृत्य करते हैं। कुछ जनजातियाँ अपनी खेती में कुछ खास फसल बोने के समय अपने पुजारी से बातचीत करके देवी-देवता को प्रसन्न करने के लिए अपने गहन वादन से उन्हें मनाते हैं और राभा जाति में छावा नृत्य प्रचलित है। बहुरंगी वस्त्र पहनकर और अलग-अलग समूह में बटकर यह नृत्य करते हैं। कछारी जनजाति में खुजली नृत्य, विवाह जनजाति में छात्र में छावा नामक नृत्य, देउरी जनजाति के बीच विश् नृत्य, मिसिंग जनजाति में गुमराग नृत्य जो बसंत के समय मार्च-अप्रैल के महीने में गायन करते हुए युवक-युवतियाँ नृत्य करते हैं। इसी तरह अनेक प्रकार के नृत्य होते हैं जैसे तितलियों की तरह नृत्य करना जिसमें उछलना कूदना होता है और कहीं-कहीं पर जुलाई के बाद खुशी को प्रदर्शित करने के लिए जैसे खेती की अच्छी फसल होने पर भी नृत्य किया जाता है। इसी प्रकार कई वर्षों से कई पीढ़ियों से चली आ रही आदिवासी नृत्य अपने आप में अपनी पीढ़ी का अस्तित्व आज भी जीवित रखे हैं। जब वे पूजा-उपासना करते हैं तो उसमें भी लोक नृत्य की चर्चा करते हैं और अनुष्ठान के समय उसे प्रस्तुत करते हैं। इसी तरह प्राचीन संस्कृति और विभिन्न प्रकार के नृत्य जनजातियों में एक अपना अलग स्थान बनाए हुए हैं।

भारतवर्ष प्राकृतिक संपदाओं से भरा हुआ संपूर्ण देश है। जहाँ पर जनजातियाँ अलग-अलग छोटे तथा बड़े समूह में एक साथ ही निवास करती हैं। पूर्वोत्तर भारत से लेकर असम के क्षेत्र, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा और मेघालय, सिक्किम इत्यादि को लेकर भारत में लगभग ढाई सौ जनजातियाँ निवास करती हैं। इन जनजातियों में जैसे कि मेघालय में गारो, खासी, जयंतिया आदि जनजातियाँ रहती हैं। तो त्रिपुरा में त्रिपुरा जनजाति, मिजोरम में मिजो, कुकिचीन आदि जनजातियाँ निवास करती हैं। तथा असम प्रांत के क्षेत्र में रहने वाली बोडो, कछारी, राभा, तुरंग, कार्बी, मिसिंग, दोवनिया, तुरंग, सुतिया, सोनवाल, कछारी, डिमासा, गारो आदि उल्लेखनीय हैं। अरुणाचल प्रदेश में अका, मनपा, डफला, भोटिया, मिजि, खोवा, आबर, मिमग, पर्वतीय मिरि, इसके अलावा और भी जनजातियाँ हैं। जो हमारे देश में अपनी अलग पहचान बनाकर निवास करते हुए अपने जीवन यापन को पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ा रही हैं।

जनजाति जीवन

संपूर्ण भारत एक कृषि प्रधान देश है। जिसमें विभिन्न प्रकार की भाषा, वेशभूषा, संस्कृति, त्योहार और जनजातीय तथा अलग-अलग समूह में अपने लोगों के साथ रहते हुए जगह-जगह बसे हुए हैं। जिनमें कुछ जनजातियाँ पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करती हैं तथा कुछ तराई क्षेत्र में निवास करती हैं। बदलते समय के साथ-साथ जहाँ इन्होंने शिकार करना कम कर दिया है, वहीं यह विभिन्न प्रकार जैसे मछली पालन, खेती, बुनाई, फुलेरा बनाना इत्यादि काम को अपना कर अपना जीवन यापन किया है। और कुछ जनजातियाँ और कुछ जनजातियों में शिक्षित वर्ग हैं जो सामाजिक तौर पर लोगों से जुड़े हुए हैं और कुछ प्राकृतिक तौर पर अपनी प्रकृति से ही प्रेम करते हैं और सामाजिक तौर पर कटे रहते हैं जो किया वर्ग कम शिक्षित होने के साथ आज भी तंत्र-मंत्र, टोना-टोटका, जादू इत्यादि पर विश्वास करते हैं। आज भी इसके उनके जीवन आधार मांस, मदिरा, पान इत्यादि है। जहाँ कुछ जनजातियाँ वर्तमान समय में अपना व्यवसाय कर जीवन यापन करती हैं और सामाजिक तौर पर जुड़ी हुई हैं। प्राकृतिक संपदाओं से युक्त भारत के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न नाम से जानी जाती हैं। कहीं-कहीं यह छोटे तथा कहीं-कहीं बड़े समूह में एक साथ ही निवास करती हैं।

अनुचित और जनजाति क्षेत्र का प्रशासन संविधान में असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम के जनजाति क्षेत्र के बारे में पृथक व्यवस्था की गई है। अनुच्छेद 244 (1) उन क्षेत्रों के लोगों के पिछड़ेपन के आधार पर किया गया है। राष्ट्रपति मेघालय, त्रिपुरा या मिजोरम से भिन्न राज्यों में अनुसूचित जनजाति के रूप में विनिर्दिष्ट जनजाति के निवास के क्षेत्र हैं। ऐसे क्षेत्र जिसके लिए प्रशासन ने विशेष पाँचवीं अनुसूची में उपलब्ध किया है। किंतु नागालैंड राज्य की रचना के बाद (1972, 1984, 1988, 2003) यथा संशोधित इस सारणी में 9 क्षेत्र हैं

माया नगरी में आदिवासी - जैसा कि हम सब अच्छी तरह जानते हैं कि आदिवासी समाज में महिला या पुरुष किसी के भी अंदर प्रतिभा की कोई कमी नहीं है, न ही इनके अंदर जज्बे की कमी है। यह अपने जीवन शैली को लेकर हीनता से ग्रस्त भी नहीं है। और प्रकृति चित्रण सौंदर्य और उनके संघर्ष की कहानी जो सच्ची घटनाओं पर आधारित है। उन पर अनेक फिल्म बनाई गई जो फिल्मी दुनिया में अपना एक अलग स्थान प्राप्त करती हैं। और अनेक फिल्म फेस्टिवल में वह अवार्ड की गई है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जिसमें यह दिखाया गया है कि एक आदिवासी जीवन में अपने संघर्ष, अपनी समस्या, अपनी जमीन, जल, जंगल को लेकर एक संघर्ष के ऊपर भी अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं और आज के दौर में जहाँ एक्शन मूवी, रोमांस मूवी और वेब सीरीज का समय है जो युवाओं को दिन-पर-दिन सपने दिखाने का कार्य कर रही है जैसे उनमें नशे की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

आदिवासी जीवन में लोक कथाओं का अपना अलग ही महत्व है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चला करती हैं जिसमें प्रेम का वर्णन, उत्सुकता का वर्णन, रहस्य, रोमांच, मंगल कामना की भावना तथा भूत-प्रेत, पिशाच, दानव इत्यादि से संबंधित लोक कथाओं का अपना अलग ही स्थान है। लोक कथाओं को हम लिखित रूप में भी देख सकते हैं जैसे ब्राह्मण ग्रंथ में उपनिषद, पुराण, उपपुराण, व्रत कथा, कथासरित्सागर, पंचतंत्र, हितोपदेश, बेताल पच्चीसी, जातक माला, जैन कहानी इसी परंपरा की वाहक हैं।

आदिवासियों के जीवन में लोकोक्तियाँ, मुहावरे तथा पौराणिक कथाएँ, उनकी लोक गाथाएँ और लोक-परलोक की कहानी पर अपने सामूहिक या एकांतिक नाट्य के माध्यम से अपनी संस्कृति का संवहन करते हैं। देश के समस्त भागों में जनजाति समुदाय में रहने का चलन है। जो जनजाति समुदाय नदी के किनारे, तराई क्षेत्र, वन, पहाड़ी जंगलों तथा अन्य स्थानों पर अपने समूह में रहकर विभिन्न प्रकार के पर्व, त्योहार और उनके पूजा-पाठ, तंत्र-मंत्र अपने देवी-देवता को प्रसन्न करने के लिए प्राकृतिक रूप से भी जुड़े हुए हैं। उनके अपने गीत, लोकगीत अनेक सामाजिक जीवन से संबंधित हैं। जैसे परिवार में कोई बच्चा जन्म लेता है तो गीत गाए जाते हैं। उत्सव, वैवाहिक समारोह, माता-पिता अपने पूर्वज से संबंधित, माँ और बच्चे से संबंधित संस्कार, धार्मिक गीत, पुनर्जन्म को लेकर, सामाजिक घटना को लेकर गीत गाए जाते हैं। अपनी दैनिक कार्य को करते हुए गीत गाने का अपना अलग ही एक आनंद होता है। जैसा कि हम सब जानते हैं कि गीतों के माध्यम से युवा अपनी विरह वेदना अपनी प्रेमिका के प्रति प्रकट करते है....

जनजाति गौरव दिवस में जो उत्तर प्रदेश में आयोजित की गई थी। लोकनायक बिरसा मुंडा की जयंती पर अंतरराष्ट्रीय जनजाति भागीदारी उत्सव जिसमें शिल्प मेले का आयोजन किया गया था। भारतवर्ष के संपूर्ण राज्यों से लगभग 100 दुकानों के व्रत शिल्प मेले का आयोजन हुआ जिसमें उत्तर प्रदेश की बनारसी साड़ी, मध्य प्रदेश से चंदेरी महेश्वरी साड़ी, पश्चिम बंगाल से काँथा, महाराष्ट्र से कोसा सिल्क, बिहार से भागलपुर सिल्क, आंध्र प्रदेश से पोचमपल्ली तथा असम से हैंडलूम साड़ियाँ, मणिपुर, नागालैंड से बुलंदशहर जूते, हिमाचल से शाल, टोपी, जम्मू कश्मीर से शाल, पेपर मेसी, गुजरात से शाल, छत्तीसगढ़ से को बंबू एवं डोकरा शिल्प तथा उत्तर प्रदेश की सिक्की घास टोकरी एवं अन्य सजावट के समान, हैंड ब्लॉक प्रिंट चादर, बंगाल की टेराकोटा ज्वेलरी एवं धन ज्वेलरी, बिहार की मधुबनी एवं मंजूषा चित्रकार, उत्तराखंड से हैंडलूम चादर, राजस्थान से जयपुरी रजाई, कर्नाटक से खिलौने, तमिलनाडु से कांजीवरम साड़ियाँ तथा झारखंड से झूठ उत्पादन के साथ-साथ जनजातीय उत्सव में विभिन्न प्रकार के देसी व्यंजन का स्टॉल भी लगाया गया जिसमें आकर्षक परिधान तथा आभूषणों की विविधता को पहनकर जनजातीय ने अपने-अपने स्टॉल को प्रदर्शित किया और उनके परिधान चटक रंग के आकर्षित करने वाले थे। और कोरबा जनजाति ने सुपा आर्ट का प्रदर्शन भी किया।

निष्कर्ष

आदिवासी कला केवल सौंदर्य की वस्तु नहीं, बल्कि जीवन और प्रकृति के सामंजस्य की गाथा है। यह संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परंपराओं, गीतों, और लोकनृत्यों से जीवित रही है। बदलते सामाजिक परिदृश्य में इस विरासत का संरक्षण केवल सरकार का नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक वर्ग का उत्तरदायित्व है।

संदर्भ सूची

11. डॉ. रीता प्रताप – *भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास*

12. र.वि. साखलकर – *यूरोपीय चित्रकला का इतिहास लेखन*, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
13. डॉ. शिवानंद नौटियाल – *उत्तराखंड की जनजातियां*
14. प्रो. हेमराज मीणा (दिवाकर) – *जनजातीय भाषा सर्वेक्षण एवं संरक्षण*, केंद्रीय हिंदी संस्थान, गुवाहाटी
15. श्री कु.ल. प्रसाद उपाध्याय एवं डॉ. जो. नाली – *भूमंडलीकरण तथा असम प्रांत की भाषाओं एवं बोलियों का संघर्ष*
16. डॉ. नवीन चंद्र शर्मा – *असमिया लोक संस्कृति एवं भारत का पूर्वोत्तर परिवेश*
17. पूजा शर्मा – *पूर्वोत्तर भारत की जनजातियां और लोक साहित्य*
18. आचार्य दुर्गा दास बसु – *भारत का संविधान: एक परिचय* (14वां संस्करण)
19. **CCRT India** – *Living Tradition: Tribal and Folk Paintings of India* https://ccrtindia.gov.in
20. **Holidify Portal** – *World's Traditional Tribal Art Forms* https://www.holidify.com